रूसी कहानी

मैक्सिम गोर्की

महबूब

महबूब (रूसी कहानी) : मैक्सिम गोर्की

यह उन दिनों की बात है जब मैं शागिर्द की हैसियत से मास्को में रहता था। जिस जगह पर मैंने कमरा किराए पर लिया था, वह पुरातन दौर की टूटी फूटी इमारत थी। उसमें बस यही एक फायदा था कि किराया बहुत कम था।

मेरे सामने वाले कमरे में एक लड़की रहती थी जिसको औरत कहना ज़्यादा मुनासिब होगा। वह कुछ ऐसे किस्म की औरत थी, जिससे मेरा मतलब है, किसी के किरदार के बारे में कुछ कहना अच्छी बात नहीं! आप खुद समझ जाएं! वह पोलैंड की रहने वाली थी, सब उसे 'टेरेसा' के नाम से पुकारते थे। लाल बालों और लंबे कद वाली टेरेसा के चेहरे पर कशिश के साथ एक अजीब कशमकश भी होती थी। जैसे कि उसका चेहरा पत्थर से तराश कर बनाया गया हो। उसकी आँखों में बसी हुई चमक, टैक्सी ड्राइवर वाला रवैया और उसकी शख्सियत में नज़र आती मर्दानगी, ये सब बातें मेरे अंदर एक डर पैदा करती थीं।

उसका दरवाजा मेरे दरवाज़े के बिल्कुल सामने था। जब भी मुझे यक़ीन होता कि वह घर में मौजूद है तो मैं अपना दरवाज़ा कभी भी खुला नहीं रखता था। पर ऐसा कभी कभार होता था। दिन

में मैं कमरे में नहीं होता था, रात को वह बाहर चली जाती थी। कभी कभी सीढ़ियों पर उससे सामना हो जाता तो उसके होठों पर मुस्कान आ जाती थी। पर न जाने क्यों मुझे उसकी यह मुस्कान व्यंगात्मक लगती।

दो-तीन बार मैंने उसे नशे की हालत में दरवाज़े के पास खड़े देखा। उसके बाल खुले हुआ करते, आँखों में उदासी और वीरानी और होंठों पर वही कटक पूर्ण मुस्कान। ऐसे मौकों पर वह मुझसे कुछ न कुछ जरूर कहती थी।

‘क्या ख्याल है मेहरबान शागिर्द?’ और फिर उसकी असभ्य हंसी गूंजने लगती थी, जो, उसके लिए मेरे दिल में बसी नफ़रत में और इज़ाफा कर देती।

इस तरह की मुलाक़ातों और वाक्यों से बचने के लिए मैं अपना कमरा भी बदलने को तैयार था। पर दिक्क़त यह थी कि दूसरा कोई कमरा खाली नहीं था। दूसरी बात यह है कि मेरे कमरे की खिड़की से बाहर जो हसीन नज़ारा दूर-दूर तक नज़र आता था, वह सुविधा हर कमरे में न थी। इसलिए मैं दिल में ‘व्यथित’ होते हुए भी बस ख़ामोशी से उसे बर्दाश्त करता रहता था।

एक दिन खाट पर लेटा कमरे की छत को घूर रहा था और कक्षा में गैर हाज़िर होने का बहाना ढूंढने में व्यस्त था, तब दरवाजा खुला और टेरेसा तेज़ी से भीतर दाखिल हुई।

‘बादशाही बरक़रार हो जनाब शागिर्द!’ उसने अपनी सख्त आवाज में कहा।

'क्या बात है?' मैं उठकर बैठ गया। उसके चेहरे पर मुझे परेशानी और एक भीतरी उलझाव दिखाई दे रहा था। ये उसके व्यक्तित्व के विपरीत कुछ अजीब लक्षण थे।

'देखो' टेरेसा शब्दों को तोलते हुए कहने लगीः 'मुझे...मुझे...मैं एक निवेदन लेकर आई हूँ।'

मैं खाट पर बैठे उसे देखता रहा। मैंने सोचा 'या मौला' ये तो मेरे पास किरदार पर होने वाला हमला है। हिम्मत कर नौजवान, हिम्मत से काम लो।'

टेरेसा वहीं दरवाजे पर खड़े खड़े कहने लगी, 'मैं एक खत भेजना चाहती हूँ, मेरा मतलब है एक पत्र लिखवाना चाहती हूँ। बस यही बात है।'

उसकी आवाज आश्चर्यजनक रुप से बहुत ही नर्म, डरी हुई और गुज़ारिश करती हुई लगी। मैंने दिल ही दिल में खुद पर लानत भेजी और बिना कुछ कहे उठकर लिखने वाली मेज़ के पास रखी कुर्सी पर जा बैठा।

'हूँ' मैंने कहा 'बैठो और लिखवाओ।'

वह चुपचाप चलते हुए दूसरी कुर्सी पर सावधानी से बैठी। उसके बाद उसने मेरी ओर इस तरह देखा जैसे कोई बच्चा गलती करने के पश्चात शर्मसारी से देखता है।

मैंने कहा 'किसके नाम लिखवाना है?'

'बोरिस कारपोफ़ (Boris Karpov) के नाम' उसने कहा। 'वह वारसा में रहता है, तीसरे मर्कजी रोड के फ्लैट नंबर तीन सौ

बारह में।'

'जी कहिए क्या लिखवाना है।'

'मेरे प्यारे बोरिस,' उसने कहना शुरु किया। 'मेरी जान, मेरे महबूब, मेरी जान तुम में अटकी हुई है। तुमने बहुत समय से कोई स्नेह भरा संदेश नहीं भेजा है। क्या तुम्हें अपनी नन्ही उदास कबूतरी की याद नहीं आती? फ़क़त तुम्हारी टेरेसा।'

मैंने बड़ी मुश्किल से अपने आप को ठहाका लगाने से रोका। 'नन्ही उदास कबूतरी' यानि आप खुद सोचिए, कबूतरी का कद छः फुट हो सकता है? उसके हाथ पत्थर की तरह सख्त हो सकते हैं? बरसात के दिनों में भीगने से परहेज करने वाली ऐसी कबूतरी हो सकती है जिसका घोसला पेड़ों की बजाय किसी घर की चिमनी में हो?'

ऐसे में मैंने खुद पर जाब्ता रखते उससे पूछा, 'यह बोरिस कौन है?'

'बोरिस कारपोफ़' उसने सख्त लहज़े में जैसे मुझे पूरा नाम लेने की हिदायत दी।

'एक नौजवान।'

'...........नौजवान!'

'हाँ, पर तुम हैरान क्यों हो?...। क्या मुझ जैसी लड़की का कोई नौजवान महबूब नहीं हो सकता?'

मैंने उसे गौर से देखा। वह जो खुद को लड़की कहने पर तुली हुई थी, उसका भला क्या इलाज हो सकता है? मैंने कहा

'नौजवान महबूब हो सकता है, क्यों नहीं हो सकता?'

उसने कहा,'मैं तुम्हारी तहे दिल से शुक्रगुज़ार हूँ, यह खत लिखकर तुमने मुझ पर एहसान किया है। अगर तुम्हें कभी, किसी भी तरह की मदद की ज़रुरत हो तो बिना हिचकिचाहट .....!'

'नहीं, नहीं...' मैंने कहा।
'बहुत बहुत मेहरबानी।' उसने फिर कहा, 'अगर किसी कमीज़ का बटन लगवाना हो या सिलाई वगैरह करवानी हो....'

मैंने अपना चेहरा शर्म से लाल होते हुए महसूस किया और सख्ती के साथ उसकी ओर देखते हुए कहा कि मुझे इस तरह की किसी भी ख़िदमत की ज़रुरत नहीं है।
वह चली गई।
दो हफ़्ते बीत गए।

एक दिन शाम के वक्त मैं खिड़की के पास खड़ा, बाहर का नज़ारा देखते हुए सैर के लिए जाने की सोच रहा था। हक़ीक़त तो यह थी कि मैं बहुत बेज़ार था, मौसम भी खराब था, बाहर जाकर कुछ सुकून हासिल करने की गुंजाइश कम ही थी। उस कशमकश का कोई हल निकले, यही सोच बेज़ार कर रही थी। उस वक्त कोई और मसरुफियत भी नहीं थी।
उसी वक्त दरवाज़ा खुला और कोई अंदर चला आया।
'मेहरबान शागिर्द तुम्हें कोई व्यस्तता तो नहीं...है...?' मैंने मुड़कर टेरेसा को देखा। उसके अंदाज में वही नरमी और वही गुज़ारिश

थी।

मैंने कहा.‘नहीं...ऐसी कोई बात नहीं...क्या काम है?’

‘मैं चाहती हूँ कि तुम एक और ख़त लिखकर दो।’

‘जी, ‘बोरिस कारपोफ़’ के नाम?’

‘नहीं इस बार यह खत उनकी तरफ से है।’

‘क्या...?’

‘मैं भी कितनी अहमक़ हूँ।’ टेरेसा ने कहा।

‘यह खत मेरे लिए नहीं है मेहरबान शागिर्द, मैं माफ़ी चाहती हूँ। यह मेरे एक दोस्त की तरफ से है...दोस्त नहीं, एक जान पहचान वाले की तरफ से है। उसकी भी मेरे जैसी यानि टेरेसा जैसी एक महबूबा है, समझ रहे हो ना? वह उसे ख़त लिखवा कर भेजना चाहता है, क्या तुम उस दूसरी टेरेसा के नाम ख़त लिख दोगे?’

मैंने गौर से उसे देखा। उसके चेहरे पर परेशानी थी और उसके हाथ कांप रहे थे। धीरे धीरे बात कुछ समझ में आने लगी।

‘सुनो मैडम...’ मैंने कहा ‘यह चक्कर क्या है? मुझे यक़ीन है कि आप मुझे हकीक़त नहीं बता रही हो। और अब तो मुझे गुमान हो रहा है कि यह बोरिस और टेरेसा कहीं भी नहीं हैं। आप इस गोरख धंधे से मुझे दूर ही रखें। मुझे माफ़ कीजिए, उम्मीद है कि आप मेरी बात भली-भांति समझ गई होंगी। मैं ऐसी दोस्ती हर्गिज़ भी बढ़ाना नहीं चाहता।’

मेरी बात सुनकर वह भयभीत हो गई। आगे बढ़ने या वापस जाने की कशमकश में जकड़ी हुई, कुछ कहने और न कहने के बीच

में फंसी हुई। जाने अब क्या होने वाला था? शायद मुझे अंदाजा लगाने में गलती हो गई थी। शायद बात कुछ और थी।

‘मेहरबान शागिर्द...’ उसने कहा और फिर अचानक खामोश हो गई। उसने अपनी गर्दन हिलाई, मुड़कर दरवाज़े की ओर चलने लगी, दरवाजे के पास पहुँचकर क्षण भर के लिए रुक गई और फिर बाहर निकल कर चली गई।

मैं गुस्से और शर्मिंदगी की हालत में परेशान था। बाहर गैलरी से उसके दरवाज़ा खुलने और धमाके से बंद होने की आवाज़ आई। वह निश्चिंत ही बहुत गुस्से में थी। मैंने दिल ही दिल में खुद को कोसा और उसके पास जाकर उसे मना कर अपने कमरे में ले आकर उसकी मर्जी के अनुसार खत लिखने का फैसला किया। उसके कमरे का दरवाज़ा खोल कर भीतर गया। वह कुर्सी पर सर झुकाए बैठी थी।

‘सुनो...!’ मैंने कहा।

मेरी आवाज सुनते ही वह उछल कर खड़ी हो गई। उसकी आँखें लाल थी। वह तेज़ी से मेरी ओर आई, मेरे कंधे पर हाथ रखकर दर्द भरे स्वर में कहा.‘मैं नहीं सुनूँगी, तुम सुनो। वह बोरिस कहीं भी न हो और ये टेरेसा ‘मैं’ भी कहीं न रहूँ, उससे तुम्हें क्या फ़र्क पड़ता है? क्या कागज़ पर कलम चलाना तुम्हारे लिए मुश्किल काम है? कहो...! मान लो कि न कोई बोरिस है, न ही कोई टेरेसा है, इससे अगर तुम्हें खुशी मिलती है तो खुश हो जाओ।’

मैं हैरानी से उसकी और देखता रहा।

'माफ़ करना...' मैंने कहा 'यह सब क्या है? क्या तुम यह कहना चाहती हो कि कोई बोरिस नहीं है.....? और न ही कोई टेरेसा है?'

'टेरेसा तो मैं हूँ।'

मेरी समझ में कुछ भी नहीं आया। मैं उसके चेहरे को ताकता रहा और सोचता रहा कि न जाने हम दोनों में से पागल कौन है? वह खुद को संभालते हुए एक तरफ हो गई और मेज़ की दराज़ खोलकर कुछ ढूंढने लगी। फिर एक कागज़ का टुकड़ा लेकर मेरी तरफ़ आई।

'तुम्हारे लिए, मेरी खातिर बोरिस को खत लिखना इतना ही मुश्किल काम था, तो यह लो।' कहते हुए उसने वह कागज़ का टुकड़ा मेरे मुंह पर दे मारा।

'यह वही ख़त है जो तुमने बोरिस के नाम लिखा था। मैं किसी और से लिखवा लूँगी।'

मैं उसकी ओर बस देखता ही रहा। फिर कहा 'देखो टेरेसा, इन सब बातों का मतलब क्या है? तुम किसी और से ख़त क्यों लिखवाओगी? जबकि मैं बोरिस के नाम का खत तुम्हें लिखकर दे चुका हूँ, जो तुमने उसे भेजा ही नहीं है?'

'कहाँ नहीं भेजा?' उसने कहा,'बोरिस को।'

मैं चुपचाप खड़ा रहा।

'कोई बोरिस नहीं है।' उसने चिल्लाते हुए कहा। 'पर मैं चाहती हूँ कि वह रहे। मैंने बोरिस के नाम खत लिखवाया तो उसे किसी

को क्या नुकसान पहुँचा? अगर वह इस दुनिया में कहीं भी मौजूद नहीं है तो उससे क्या फर्क पड़ता है?’

उसने वहशत की हालत में कहा, ‘मैं उसके नाम का खत लिखवाती हूँ तो मुझे लगता है कि वह कहीं मौजूद है। और फिर मैं एक खत उसकी ओर से अपने लिए लिखवाती हूँ, और फिर उसका जवाब लिखवाती हूँ।’

उसकी आँखों से अविरल आँसुओं की धार बह रही थी ‘तुम बोरिस की तरफ़ से वह खत लिख देते तो मैं किसी और से पढ़वा लेती और फिर सोचती कि बोरिस, मेरा महबूब कहीं मौजूद है। वो लिखे हुए ख़त मेरे पास रहते उन्हें सुनकर और लिखवाकर अपने भीतर एक नई दुनिया आबाद करके, इस मक्कार और बदसूरत दुनिया की कड़वाहटों को कम महसूस करती। इसमें तुम्हारा या किसी और का, या इस दुनिया का क्या बिगड़ता?’

मैं गर्दन झुकाए खड़ा रहा जैसे कोई गुनहगार अदालत में खड़ा रहता है, और मैंने आँखों में भर आए आब को रोकने की कोशिश भी नहीं की।

(अनुवाद-देवी नागरानी